यूरोप का धर्मसुधार आन्दोलन

ग्यारहवीं, बारहवीं तथा तेरहवीं शताब्दी के पोपों ने जिस शक्तिशाली चर्च की स्थापना की थी, उसकी नींव हिल चुकी थी। सम्पूर्ण समाज का दृष्टिकोण धर्मनिरपेक्ष होता जा रहा था। राष्ट्रीयता पर आधारित राज्यों के विकास के साथ-साथ राजागण और उसकी प्रजा अपने आप को विशिष्ट हितों पर आधारित राजनीतिक इकाइयाँ समझने लगी। ईसाई जगत के हितों की बजाय उनकी दृष्टि में अपने राज्य की भलाई का अधिक महत्व हो गया।

अतः मानवतावाद के विकास के लिए ईसाई धर्म की प्रतिष्ठित मान्यताओं, संस्थाओं, रीति-रिवाजों तथा पदाधिकारियों के विरुद्ध जिस विद्रोह-भावना का सूत्रपात हुआ, उसे मध्यकालीन यूरोप के इतिहास में धर्म-सुधार आंदोलन की संज्ञा दी गई है।

धर्मसुधार के कारण -

यूरोपीय धार्मिक आन्दोलन के सूत्रपात होने के कई कारण हैं। इनमें प्रमुख हैं - राजनीतिक कारण, आर्थिक कारण, धार्मिक कारण और पुनर्जागरण का सहयोग।

राजनीतिक कारण -

राष्ट्रीय राज्यों और निरंकुश राजतंत्र के उत्थान के कारण लोगों के लिए चर्च अथवा पोप का नियंत्रण स्वीकार करना संभव नहीं था। राजा पोप के प्रशासनिक हस्तक्षेप को नापसंद करता था।

दोनों के विरोध का एक कारण पादरियों की नियुक्ति का प्रश्न भी था। दोनों एक दूसरे के हस्तक्षेप के विरोधी थे।

न्याय को लेकर भी राजा और पोप एक दूसरे के प्रतिद्वंदी थे। न्यायालय को लेकर ही फ्रांस के शासक फिलिप द फेयर तथा चर्च के पोप बोनिफेस अष्टम के मध्य तनाव बढ़ा था।

भूमि कर का प्रश्न भी दोनों के तनाव का कारण बन रहा था। चर्च की

चर्च की भूमि पर राजा कर नहीं लगा सकता था और वह कर-मुक्त थी यूरोप का चर्च लगभग आधिकांश भूमि उसी के पास थी और वह भी कर मुक्त। राजा इस भूमि व्यवस्था को राजकीय प्रभुत्व मानकर भूमि पर राज्य का नियंत्रण कायम करना चाहता था और उसपर कर भी लगाना चाहता था।

आर्थिक कारण —

राजतंत्र के उदय के कारण राजा सेना रखने लगे थे। शासन के खर्च बढ़ रहे थे। इस खर्च की पूर्ति राजा कर नहीं सकता था। दूसरी तरफ चर्च के पास अपार सम्पत्ति थी। न्यायालयों की आय और भूमि की उपज चर्च के पास चली जाती थी।

चर्च की आर्थिक नीति भी धार्मिक आन्दोलन की जड़ में थी। चर्च सूद तथा मुनाफा लेना पाप समझता था। लेकिन आर्थिक नीति में हो रहे परिवर्तन के कारण व्यापार में उत्तरोत्तर

विकसित हो रहे थे। अब स्वयं लेना और मुनाफा कमाना दोनों ही आवश्यक थे। व्यापारियों ने चर्च की आर्थिक नीति का विरोध किया। चर्च की अर्थनीति से जनता भी उत्पीड़ित थी। पोप स्वयं टैक्स लेता था, पर टैक्स के नाम पर चर्च को कुछ भी नहीं देता था। चर्च के शोषण से किसान इतने अधिक असंतुष्ट थे कि वे कभी-कभी विद्रोह भी कर बैठते थे।

धार्मिक कारण –

धर्म सुधार आंदोलन के प्रादुर्भाव में धार्मिक तत्वों ने भी सक्रियता दिखाई। पोप, पादरी और उनके गिरजे भ्रष्टाचार के अखाड़े बन गए थे। धन-संग्रह की प्रवृत्ति निरंतर बढ़ती जा रही थी। पोप सर्वथा पापी और पाखंडी हो गए थे। उनमें रचना भी नहीं थी।

पोप द्वारा प्रचलित क्षमापत्र (indulgence) खरीदने की प्रथा ने भी उन लोगों को

दक्षिणा का पात्र बना दिया था। पोप ने धनार्जन करने के लिए दाना-पत्र निकाला। जिसे खरीदकर लोग पाप से मुक्ति पा सकते थे और स्वर्ग जा सकते थे। मुक्ति के द्वार की कुंजी पोप के हाथ में थी। पोप ने पापों की एक फेहरिस्त भी तैयार की थी। पहला पाप था पोप को अपने आमदनी का दसवाँ हिस्सा नहीं देना, दूसरा था उपहार नहीं देना और तीसरा था सम्पूर्ण नहीं देना इसी तरह अन्य पाप भी थे।

पुनर्जागरण का प्रभाव –

मुद्रण यंत्रों के आविष्कार के कारण चर्च की आलोचना अधिक से अधिक लोगों के पास पहुँचने लगी और वे परिस्थितिजात बुराइयों के प्रति जागरूक होने लगे।

धर्मनिष्ठ लोगों ने चर्च के भीतर सुधारों के लिए आवाज उठाई। चौदहवीं शताब्दी में जॉन वाइक्लिफ ने इंग्लैंड में पादरी वर्ग के ठाट-बाट के विरुद्ध उपदेश दिया था और उन्होंने

अपने आसपास कुछ ऐसे पादरी एकत्रित किए थे जो लोगों में रहना चाहते थे। बाइबिल की रचनाओं को अनुदित करके वितरित किया जाने लगा। यहीं से सुधार-आन्दोलन प्रारंभ हुआ महान विद्वान इरेसमस ने भी सुधार की आवश्यकता बताई। उनका विश्वास था कि धर्म में प्रवेश किए गए अंधविश्वास को शिक्षा के माध्यम से दूर किया जा सकता है।

अतः पुनर्जागरण ने तर्क और विवेक को स्थान देकर राष्ट्रीय भावना को जन्म दिया और धर्म की जड़ को खोद डाला।

धर्मसुधार आन्दोलन का समान सूत्रपात जर्मनी में मार्टिन लूथर (1483-1546) द्वारा प्रारंभ किया गया।

धर्म-सुधार-आन्दोलन के परिणाम -

16वीं शताब्दी के धर्म-सुधार-आंदोलन तथा प्रोटेस्टेंटो की सफलता ने यह स्पष्ट कर दिया कि अपने स्थायित्व के निमित्त रोमन कैथोलिक चर्च में भी सुधार आवश्यक है। इस आन्दोलन का प्रमुख उद्देश्य था चर्च संगठन एवं कार्य-विधि से सम्बद्ध रूढ़ियों में परिवर्तन लाना। पोप पॉल चतुर्थ ने इस आन्दोलन का नेतृत्व ग्रहण किया।

सुधार आन्दोलन के प्रख्यात दो पक्ष थे - धर्म-सिद्धान्तों की व्याख्या तथा धर्म-प्रचार-कार्य। जेसुइट पादरी जहाँ कहीं भी गए वहाँ शिक्षा-प्रचार, दीन-दुखियों की सेवा कर लोगों का हृदय जीतने में सफल हुए। उनकी निःस्वार्थ सेवा से प्रभावित होकर अनेक लोग रोमन कैथोलिक धर्म की ओर पुनः आकर्षित हुए। अतः चर्च के प्रभाव की प्रक्रिया रुक गई और जिन देशों में अभी कैथोलिक धर्म शेष था, वहाँ इसकी जड़ मजबूत हुई।

सामाजिक परिणाम -

धर्म-सुधार आन्दोलन के फलस्वरूप, कैथोलिक एवं प्रोटेस्टेंट में अपनी 2 श्रेष्ठता प्रमाणित करने की होड़ सी चल पड़ी। अब कर्मकांडों की जगह पर आचरण की शुद्धता पर अधिक जोर दिया जाने लगा। अनेक सामाजिक अन्ध-विश्वासों का लोप होने लगा।

एक सामाजिक दुष्परिणाम यह हुआ कि गिरजों और मठों की रोटी पर पलने वाले अनेक लोग आश्रयहीन हो गए। अतः कई देशों में गरीबी तथा बेकारी की समस्या उत्पन्न हुई। सामाजिक विविधता में कमी आ गई।

राजनीतिक परिणाम -

~~इससे~~ धर्म सुधार आन्दोलन का एक महत्वपूर्ण परिणाम यह भी था कि इससे ईसाई-धर्म की एकता का अन्त हो गया। ईसाई चर्च दो भागों में विभक्त हो गया - प्रोटेस्टेंट तथा कैथोलिक। आगे चलकर इन दोनों वर्गों के भी उपवर्ग उठ खड़े हुए। धार्मिक विभाजन ने राजनीतिक गुटबंदियों को जन्म दिया।

धर्म सुधार आन्दोलन से राजाओं की शक्ति में अपार वृद्धि हुई। पोप विदेशी था। उसके विरुद्ध आन्दोलन होने से राष्ट्रीयता की भावना सबल हुई। पोप के प्रभाव से मुक्त हो जाने के बाद राजागण अपने राज्यों की सीमा के अन्तर्गत विरोधियों के कार्यों मुक्त हो गए। इस तरह, राष्ट्रीय राज्यों की शक्ति में वृद्धि हुई और निरंकुश राजतंत्र को प्रोत्साहन मिला। आगे चलकर वैधानिक शासन की प्रगति जगी और निरंकुश राजाओं की शक्ति घटने लगी।

सांस्कृतिक परिणाम :

इस आन्दोलन के पूर्व सम्पूर्ण ईसाई-जगत रुढ़िगत परम्पराओं तथा अंधविश्वासों से ग्रस्त था। धर्म सुधार आन्दोलन ने सभी अंधविश्वासों को निर्मूल साबित कर ईसाई जगत के मानसिक उन्नयन का मार्ग प्रशस्त कर दिया। अब शिक्षा एवं साहित्य की प्रगति विशेष रूप से हुई। धर्म सुधारकों ने अनेक ग्रंथों की रचना की और बाइबिल का स्थानीय भाषाओं में

अनुवाद हुआ। अब शिक्षा का स्वरूप धर्म-निरपेक्ष होता गया और चर्च की सामान्य जनता पर सामाजिक प्रभाव घटने लगा। इस प्रकार, एक ओर तो लोक भाषाओं, साहित्य, विज्ञान और कला की विशेष उन्नति हुई और दूसरी ओर, ईसाई जगत की चिन्तन शक्ति की ओर अग्रसर हुई। इससे वैज्ञानिक उन्नति को प्रोत्साहन मिला।

आर्थिक परिणाम :

धर्म सुधार आंदोलन का ईसाई जगत की अर्थव्यवस्था पर भी गहरा प्रभाव पड़ा। चर्च सूद और मुनाफे का विरोधी था। अतः चर्च की इस नीति से वाणिज्य-व्यापार तथा उद्योग-धंधों को प्रोत्साहन नहीं मिलता था। यूरोप की समस्त अर्थव्यवस्था शिथिल पड़ गई थी परंतु प्रोटेस्टेंट मत के नेता सूद और मुनाफे का समर्थन करते थे। उन्होंने एक उचित सीमा के अन्दर सूद लेना और मुनाफा कमाना उचित ठहराया। इससे वाणिज्य-व्यापार के प्रसार को नई शक्ति मिली। अब

व्यावसायिक क्षेत्र में आधुनिकता का प्रवेश हुआ। मध्ययुगीन सामंती अर्थ-व्यवस्था के अन्तर्गत, भूसंपदा का विशेष महत्त्व था। परंतु, पंद्रहवीं तथा सोलहवीं शताब्दियों में सामंतवाद के पराभव के बाद अर्थ-व्यवस्था मुद्रा पर आधारित हो गई। पूंजी की अभिवृद्धि और धन-संचय की ओर रुझान होने लगा। आर्थिक प्रगति के साथ-साथ राष्ट्रीय संपदा में भी वृद्धि होने लगी। विस्तृत पैमाने पर व्यापार करने के लिए वृहत् व्यावसायिक संस्थाओं की स्थापना होने लगी। फलस्वरूप, यूरोप में पूंजीवाद का विकास आसानी से संभव हुआ।